एष स्वायम्भुवः सर्गो येनेदं पूरितं जगत्। वाराहे तु मुने कल्पे पूर्वमन्वन्तराधिपः ॥४३॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे द्वितीयेंशे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

दूसरा अध्याय

श्रीमैत्रेय उवाच

कथितो भवता ब्रह्मन्सर्गः स्वायम्भुवश्च मे। श्रोतुमिच्छाम्यहं त्वत्तःसकलं मण्डलं भुवः ॥१॥
यावन्तः सागरा द्वीपास्तथा वर्षाणि पर्वताः। वनानि सरितः पुर्यो देवादीनां तथा मुने ॥२॥
यत्प्रमाणमिदं सर्वं यदाधारं यदात्मकम्। संस्थानमस्य च मुने यथावद्वक्तुमर्हसि ॥३॥

श्रीपराशर उवाच

मैत्रेय श्रूयतामेतत्संक्षेपाद्गदतो मम। नास्य वर्षशतेनापि वक्तुं शक्यो हि विस्तरः ॥४॥
जम्बूप्लक्षाह्वयौ द्वीपौ शाल्मलश्चापरो द्विज। कुशः क्रौञ्चस्तथा शाकः पुष्करश्चैव सप्तमः ॥५॥
एते द्वीपाः समुद्रैस्तु सप्त सप्तभिरावृताः। लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धजलैः समम् ॥६॥
जम्बूद्वीपः समस्तानामेतेषां मध्यसंस्थितः। तस्यापि मेरुर्मैत्रेय मध्ये कनकपर्वतः ॥७॥
चतुरशीतिसाहस्रो योजनैरस्य चोच्छ्रयः ॥८॥

भारत वर्ष को नव भागों में विभक्त किया ॥४१॥ उन सबों की सन्तानों ने इस भारत वर्ष की पृथिवी का भोग सत्ययुग, त्रेतायुग इत्यादि के क्रम से इकहत्तर चौकड़ी तक भोगा ॥४२॥ यह स्वायम्भुव सृष्टि है जिसके द्वारा जगत् परिपूर्ण है। इस वाराह कल्प में ये ही सर्वप्रथम मन्वन्तराधिप थे ॥४३॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के दूसरे अंश के प्रथम अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥२॥

भूगोल का वर्णन

श्रीमैत्रेय महर्षि ने कहा— हे ब्रह्मन्! आपने मुझे स्वायम्भुव मनु की सृष्टि का वर्णन सुनाया। अब मैं आपसे पृथिवी के विस्तार का वर्णन सुनना चाहता हूँ ॥१॥ हे मुने! जितने भी सागर, द्वीप, वर्ष, पर्वत, वन, नदियाँ तथा देवताओं आदि की पुरियाँ हैं, इस सम्पूर्ण वस्तुओं का जो प्रमाण है, उनके आधार तथा स्वरूप, एवं संस्थान का आप यथावत् वर्णन करें ॥३-४॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** मैत्रेय! सुनो; इन सारी बातों का वर्णन मैं संक्षेप में करता हूँ। विस्तार से तो इन सबों का वर्णन सौ वर्षों में भी नहीं किया जा सकता है ॥४॥ द्वीप सात हैं, जम्बूद्वीप, प्लक्षद्वीप, शाल्मली द्वीप, कुश द्वीप, क्रौञ्च द्वीप, शाक द्वीप और सातवाँ पुष्कर द्वीप ॥५॥ ये सातों द्वीप अपने समान परिमाण वाले सात समुद्रों से घिरे हैं। वे क्रमशः लवण (क्षार) समुद्र, इक्षुरस समुद्र, सुरा समुद्र, सर्पि (धृत) समुद्र, दधि समुद्र, दुग्ध (क्षीर) समुद्र तथा शुद्ध जल समुद्र ॥६॥ इस सातों द्वीपों के बीच में जम्बूद्वीप है। हे मैत्रेय! इस द्वीप के बीच में सुवर्ण का सुमेरु पर्वत है ॥७॥ उस पर्वत की ऊँचाई चौरासी हजार योजन है, और नीचे वह सोलह हजार योजन पृथिवी में गड़ा है। इसके ऊपरी शिखर का विस्तार बतीस हजार योजन है। मूल में

प्रविष्टः षोडशाधस्ताद्द्वात्रिंशन्मूर्ध्नि विस्तृतः । मूले षोडशसाहस्रो विस्तारस्तस्य सर्वशः ॥९॥
भूपद्मस्यास्य शैलोऽसौ कर्णिकाकारसंस्थितः ॥१०॥
हिमवान्हेमकूटश्च निषधश्चास्य दक्षिणे। नीलः श्वेतश्च शृङ्गी च उत्तरे वर्षपर्वताः ॥११॥
लक्षप्रमाणौ द्वौ मध्यौ दशहीनास्तथापरे । सहस्रद्वितयोच्छ्रायास्तावद्विस्तारिणश्च ते ॥१२॥
भारतं प्रथमं वर्षं ततः किम्पुरुषं स्मृतम् । हरिवर्षं तथैवान्यन्मेरोर्दक्षिणतो द्विज ॥१३॥
रम्यकं चोत्तरं वर्षं तस्यैवानु हिरण्मयम् । उत्तराः कुरवश्चैव यथा वै भारतं तथा ॥१४॥
नवसाहस्रमेकैकमेतेषां द्विजसत्तम । इलावृतं च तन्मध्ये सौवर्णो मेरुरुच्छ्रितः ॥१५॥
मेरोश्चतुर्दिशं तत्तु नवसाहस्रविस्तृतम् । इलावृतं महाभाग चत्वारश्चात्र पर्वताः ॥१६॥
विष्कम्भा रचिता मेरोर्योजनायुतमुच्छ्रिताः ॥१७॥
पूर्वेण मन्दरो नाम दक्षिणे गन्धमादनः । विपुलः पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तरे स्मृतः ॥१८॥
कदम्बस्तेषु जम्बूश्च पिप्पलो वट एव च। एकादशशतायामाः पादपा गिरिकेतवः ॥१९॥
जम्बूद्वीपस्य सा जम्बूर्नामहेतुर्महामुने । महागजप्रमाणानि जम्ब्वास्तस्याः फलानि वै ।
पतन्ति भूभृतः पृष्ठे शीर्यमाणानि सर्वतः ॥२०॥
रसेन तेषां प्रख्याता तत्र जाम्बूनदीति वै । सरित्प्रवर्त्तते चापि पीयते तन्निवासिभिः ॥२१॥
न स्वेदो न च दौर्गन्ध्यं न जरा नेन्द्रियक्षयः । तत्पानात्स्वच्छमनसां जनानां तत्र जायते ॥२२॥
तीरमृत्तद्रसं प्राप्य सुखवायुविशोषिता। जाम्बूनदाख्यं भवति सुवर्णं सिद्धभूषणम् ॥२३॥

वह सोलह हजार योजन विस्तृत है ॥८-९॥ यह पर्वत पृथिवी रूपी कमल की कर्णिका के समान है ॥१०॥ इसके दक्षिण भाग में हिमवान्, हेमकूट और निषध पर्वत हैं । इसके उत्तर में नील, श्वेत और शृङ्गी नामक वर्ष पर्वत हैं॥११॥ उनके बीच के (नील और निषध) नामक दो पर्वत एक लाख योजन में फैले हैं । दूसरे दो हिमवान और शृङ्गी दश-दश हजार योजन कम अस्सी-अस्सी हजार योजन विस्तृत हैं । ये सब दो-दो हजार योजन ऊँचे और उतने ही चौड़े हैं ॥१२॥ हे द्विज ! सुमेरु पर्वत की दक्षिण दिशा में तीन वर्ष हैं पहला भारत वर्ष, दूसरा किम्पुरुष वर्ष और तीसरा हरिवर्ष ॥१३॥ सुमेरु पर्वत के उत्तर की ओर भी तीन वर्ष है पहला रम्यक वर्ष, दूसरा हिरण्मय वर्ष और तीसरा कुरुवर्ष । यह कुरुवर्ष द्वीप मण्डल की सीमा पर होने के कारण भारत वर्ष के ही समान धनुषाकार है॥१४॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! इन सबों का विस्तार नव-नव हजार योजन है । इन सबों के बीच में इलावृत वर्ष है, उसके बीच में सुवर्णमय सुमेरु पर्वत है ॥१५॥ महाभाग ! सुमेरु पर्वत के चारो ओर इलावृत वर्ष नव हजार योजन पर्यन्त फैला है । उसके चारो ओर चार पर्वत हैं ॥१६॥ मानों ये दश हजार योजन ऊँचे चारो पर्वत सुमेरु पर्वत को धारण करने के लिए चार कीलियाँ हों । सुमेरु के पूर्व में मन्दराचल है, दक्षिण में गन्धमादन पर्वत है, पश्चिम में विपुल पर्वत है और उत्तर में सुपार्श्व पर्वत है ॥१८॥ इन पर्वतों के ऊपर पताका के समान ग्यारह-ग्यारह सौ योजन ऊँचे कदम्ब, जम्बू, पिप्पल और बट के वृक्ष हैं ॥१९॥ हे महामुने ! उनमें से जम्बू द्वीप के नाम का कारण जम्बू (जामुन) का वृक्ष है । उसके फल महागज के समान बड़े-बड़े होते हैं । वे फल पर्वत पर गिरते हैं तो फट कर चारो ओर फैल जाते हैं ॥२०॥ उनके रस से वहाँ जम्बू नाम की प्रसिद्ध नदी निकलती है । वहाँ के रहने वाले उसका जल पीते हैं ॥२१॥ उसका पान करने के कारण वहाँ के लोगों का मन स्वच्छ हो जाता है और उसके कारण वहाँ के लोगो को पसीना, शरीर से दुर्गन्धि, बुढ़ापा तथा इन्द्रियक्षय नहीं होता है ॥२२॥ नदी के तीर की मिट्टी जम्बूरस को

भद्राश्वं पूर्वतो मेरोः केतुमालं च पश्चिमे। वर्षे द्वे तु मुनिश्रेष्ठ तयोर्मध्यमिलावृतः ॥२४॥
वनं चैत्ररथं पूर्वे दक्षिणे गन्धमादनम्। वैभ्राजं पश्चिमे तद्वदुत्तरे नन्दनं स्मृतम्॥२५॥
अरुणोदं महाभद्रमसितोदं समानसम्। सरांस्येतानि चत्वारि देवभोग्यानि सर्वदा ॥२६॥
शीताम्भश्च कुमुन्दश्च कुररी माल्यवांस्तथा। वैकङ्कप्रमुखा मेरोः पूर्वतः केसराचलाः ॥२७॥
त्रिकूटः शिशिरश्चैव पतङ्गो रुचकस्तथा। निषदाद्या दक्षिणतस्तस्य केसरपर्वताः ॥२८॥
शिखिवासः सवैडूर्यः कपिलो गन्धमादनः। जारुधिप्रमुखास्तद्वत्पश्चिमे केसराचलाः ॥२९॥
मेरोरनन्तराङ्गेषु जठरादिष्ववस्थिताः। शङ्खकूटोऽथ ऋषभो हंसो नागस्तथापरः।
कालञ्जाद्याश्च तथा उत्तरे केसराचलाः ॥३०॥
चतुर्दशसहस्राणि योजनानां महापुरी। मेरोरुपरि मैत्रेय ब्रह्मणः प्रथिता दिवि ॥३१॥
तस्यास्समन्ततश्चाष्टौ दिशासु विदिशासु च। इन्द्रादिलोकपालानां प्रख्याताः प्रवराः पुरः ॥३२॥
विष्णुपादविनिष्क्रान्ता प्लावयित्वेन्दुमण्डलम्। समन्ताद् ब्रह्मणः पुर्यां गङ्गा पतति वै दिवः ॥३३॥
सा तत्र पतिता दिक्षु चतुर्द्धा प्रतिपद्यते। सीता चालकनन्दा च चक्षुर्भद्रा च वै क्रमात् ॥३४॥
पूर्वेण शैलात्सीता तु शैलं यात्यन्तरिक्षगा। ततश्च पूर्ववर्षेण भद्राश्वेनैति सार्णवम् ॥३५॥
तथैवालकनन्दापि दक्षिणेनैत्य भारतम्। प्रयाति सागरं भूत्वा सप्तभेदा महामुने॥३६॥
चक्षुश्च पश्चिमगिरीनतीत्य सकलांस्ततः। पश्चिमं केतुमालाख्यं वर्षं गत्वैति सागरम्॥३७॥
भद्रा तथोत्तरगिरीनुत्तरांश्च तथा कुरून्। अतीत्योत्तरमम्भोधिं समभ्येति महामुने ॥३८॥

प्राप्त करके जब मन्द वायु से सुख जाती है तो वह जम्बूनद नामक सुवर्ण हो जाती है, उसी से सिद्ध पुरुष अपना भूषण बनाते हैं ॥२३॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! सुमेरु के पूर्व में भद्राश्ववर्ष और पश्चिम में केतुमाल वर्ष है। उसके बीच में इलावृत वर्ष है ॥२४॥ सुमेरु पर्वत के पूर्व में चैत्ररथ वन, दक्षिण में गन्धमादनवन, पश्चिम में वैभ्राजवन और उत्तर में नन्दन वन है ॥२५॥ वहाँ पर अरुणोद, महाभद्र, असितोद तथा मानसरोवर ये देवताओं के लिए सेवनीय चार सरोवर हैं ॥२६॥ हे मैत्रेय ! शीतोद् ! कुमुन्द, कुररी, माल्यवान् तथा वैकङ्क आदि सुमेरु पर्वत के पूर्व में केसराचल हैं ॥२७॥ सुमेरु के दक्षिण ओर, त्रिकूट, शिशिर, पतङ्ग, रुचक तथा निषाद आदि चार केसराचल हैं ॥२८॥ सुमेरु पर्वत के पश्चिम में शिखिवासा, वैडूर्य, कपिल, गन्धमादन तथा जारुधि आदि केसराचल हैं ॥२९॥ सुमेरु के सन्निकट इलावृत वर्ष में तथा जठर आदि देशों में सुमेरु के उत्तर ओर शंखकूट, ऋषभ, हंस, नाग तथा कालञ्जर आदि केसराचल हैं ॥३०॥ सुमेरु पर्वत के ऊपर चौदह हजार योजन में फैली हुयी ब्रह्माजी की महापुरी अन्तरिक्ष में है॥३१॥ उसके चारो ओर दिशाओं तथा विदिशाओं में इन्द्र आदि लोकपालों की पुरियाँ प्राख्यात हैं ॥३२॥ भगवान् विष्णु के चरणों से निकली हुयी गङ्गा नदी चन्द्रमण्डल को पवित्र बनाकर, स्वर्ग से ब्रह्माजी की पुरी में गिरती है॥३३॥ वहाँ पर गिरने के बाद वह, सीता, अलकनन्दा, चक्षु तथा भद्रा इन चार धाराओं में चारो दिशाओं में प्रवाहित होती है ॥३४॥ सीता नाम की धारा एक पर्वत से दूसरे पर्वत पर आकाशमार्ग से गिरती हुयी तथा भद्राश्व वर्ष को प्लावित करती हुयी पूर्व समुद्र में जाकर मिल जाती है ॥३५॥ हे महामुने ! इसी तरह अलकनन्दा भी दक्षिण दिशा में प्रवाहित होकर भारत वर्ष में आती है और सात धाराओं में विभक्त होकर समुद्र में मिल जाती है ॥३६॥ चक्षु नाम की धारा भी पश्चिम के सभी पर्वतों को पार करके केतुमाल वर्ष में जाकर सागर मे मिल जाती है ॥३७॥ हे महामुने ! उसी तरह भद्रा नाम की धारा भी उत्तर की ओर विद्यमान सभी पर्वतों को पार करके कुरुवर्ष में आकर

आनीलनिषधायामौ माल्यवद्गन्धमादनौ । तयोर्मध्यगतो मेरुः कर्णिकाकारसंस्थितः ॥३९॥
भारताः केतुमालाश्च भद्राश्वाः कुरवस्तथा । पत्राणि लोकपद्मस्य मर्यादाशैलबाह्यतः ॥४०॥
जठरो देवकूटश्च मर्यादापर्वतावुभौ । तौ दक्षिणोत्तरायामावानीलनिषधायतौ ॥४१॥
गन्धमादनकैलासौ पूर्वपश्चायतावुभौ । अशीतियोजनायामावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ ॥४२॥
निषधः पारियात्रश्च मर्यादापर्वतावुभौ । मेरोः पश्चिमदिग्भागे यथा पूर्वे तथा स्थितौ ॥४३॥
त्रिशृङ्गो जारुधिश्चैव उत्तरो वर्षपर्वतौ। पूर्वपश्चायतावेतावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ ॥४४॥
इत्येते मुनिवर्योक्ता मर्यादापर्वतास्तव। जठराद्याः स्थिता मेरोस्तेषां द्वौ द्वौ चतुर्दिशम् ॥४५॥
मेरोश्चतुर्दिशं ये तु प्रोक्ताः केसरपर्वताः । शीतान्ताद्या मुने तेषामतीव हि मनोरमाः ।
शैलानामन्तरे द्रोण्यः सिद्धचारणसेविताः ॥४६॥
सुरम्याणि तथा तासु काननानि पुराणि च। लक्ष्मीविष्ण्वग्निसूर्यादिदेवानां मुनिसत्तम ।
तास्वायतनवर्याणि जुष्टानि वरकिन्नरैः ॥४७॥
गन्धर्वयक्षरक्षांसि तथा दैतेयदानवाः । क्रीडन्ति तासु रम्यासु शैलद्रोणीष्वहर्निशम् ॥४८॥
भौमा ह्येते स्मृताः स्वर्गा धर्मिणामालया मुने। नैतेषु पापकर्माणौ यान्ति जन्मशतैरपि ॥४९॥
भद्राश्वे भगवान्विष्णुरास्ते हयशिरा द्विज। वराहः केतुमाले तु भारते कूर्मरूपधृक् ॥५०॥
मत्स्यरूपश्च गोविन्दः कुरुष्वास्ते जनार्दनः । विश्वरूपेण सर्वत्र सर्वः सर्वत्रगो हरिः ॥५१॥
सर्वस्याधारभूतोऽसौ मैत्रेयास्तेऽखिलात्मकः ॥५२॥
यानिकिम्पुरुषादीनि वर्षाण्यष्टौ महामुने। न तेषु शोको नायासो नोद्वेगः क्षुद्भयादिकम् ॥५३॥

सागर में मिल जाती है ॥३८॥ माल्यवान् तथा गन्धमादन पर्वत नीलाचल से लेकर निषधपर्वत पर्यन्त फैले हुए हैं। उन दोनों के बीच में विद्यमान सुमेरु कर्णिका के रूप में स्थित है ॥३९॥ मर्यादा पर्वतों के बाहर, भारत, केतुमाल भद्राश्व तथा कुरुवर्ष लोक पद्म के पत्ते के समान स्थित हैं ॥४०॥ जठर और देवकूट ये दोनों मर्यादा पर्वत हैं। वे दक्षिण और उत्तर में नील और निषध पर्यन्त फैले हैं ॥४१॥ पूर्व और पश्चिम में गन्धमादन और कैलास पर्वत हैं और ये समुद्र के भीतर अस्सी योजन पर्यन्त फैले हैं ॥४२॥ पूर्व के ही समान सुमेरु पर्वत के पश्चिम की ओर भी दो मर्यादा पर्वत हैं, वे हैं निषध तथा परियात्र ॥४३॥ उत्तर दिशा में त्रिशृङ्ग (त्रिकूट) और जारुधि दो वर्ष पर्वत हैं, और वे पश्चिम में समुद्र के भीतर फैले हुए हैं ॥४४॥ हे मुनिवर्य ! इस प्रकार से मैंने आपको जठर आदि मर्यादा पर्वतों को बतलाया। उनमें से चारो दिशाओं में दो-दो पर्वत हैं ॥४५॥ हे मुने ! सुमेरु पर्वत के चारो दिशाओं में जो शीतान्त आदि केसर पर्वत बतलाये गये हैं, उन पर्वतों के भीतर सिद्धों तथा चारणों से सेवित अत्यन्त सुन्दर गुफाएँ हैं ॥४६॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! उन सबों में लक्ष्मी, विष्णु, अग्नि तथा सूर्य आदि देवताओं के अत्यन्त सुन्दर वन तथा पुरियाँ हैं। उन सबों में श्रेष्ठ किन्नरों से सेवित श्रेष्ठ गृह हैं ॥४७॥ पर्वतों की उन मनोहर कन्दराओं में रात-दिन गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, दैत्य तथा दानव कीडा करते रहते हैं ॥४८॥ हे मुने ! वे भौम स्वर्ग हैं। उनमें पुण्यकर्म करने वाले पुरुष रहते हैं। पापी जन उनमें सौ जन्मों में भी नहीं जा सकते हैं ॥४९॥ भद्राश्ववर्ष में हयग्रीव रूप से भगवान् विष्णु रहते हैं, केतुमाल में वे वाराह रूप से तथा भारत वर्ष में कूर्म रूप से रहते हैं ॥५०॥ कुरुवर्ष में भगवान् जनार्दन मत्स्य रूप से, तथा सर्वत्र व्यापक वे सर्वरूप से रहते हैं ॥५१॥ हे मैत्रेय ! अखिलात्मा भगवान् सबों के आधार हैं ॥५२॥ हे महामुने ! किम्पुरुष आदि जो आठ वर्ष हैं उनमें रहने वाले लोगों को शोक, श्रम,

स्वस्थाः प्रजा निरातङ्कास्सर्वदुःखविवर्जिता। दशद्वादशवर्षाणां सहस्राणि स्थिरायुषः ॥५४॥
न तेषु वर्षते देवो भौमान्यम्भांसि तेषु वै। कृतत्रेतादिकं नैव तेषु स्थानेषु कल्पना ॥५५॥
सर्वेष्वेतेषु वर्षेषु सप्त सप्त कुलाचलाः। नद्यश्च शतशस्तेभ्यः प्रसूता या द्विजोत्तम ॥५६॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे द्वितीयेंऽशे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

तीसरा अध्याय

श्रीपराशर उवाच

उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्। वर्षं तद्भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः ॥१॥
नवयोजनसाहस्रो विस्तारोस्य महामुने। कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गं च गच्छताम् ॥२॥
महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः। विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तात्र कुलपर्वताः ॥३॥
अतः सम्प्राप्यते स्वर्गो मुक्तिमस्मात्प्रयान्ति वै। तिर्यक्त्वं नरकं चापि यान्त्यतः पुरुषा मुने॥४॥
इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च मध्यं चान्तश्च गम्यते। न खल्वन्यत्र मर्त्यानां कर्म भूमौ विधीयते॥५॥
भारतस्यास्य वर्षस्य नवभेदान्निशामय। इन्द्रद्वीपः कसेरुश्च ताम्रपर्णो गभस्तिमान्॥६॥
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गन्धर्वस्त्वथ वारुणः। अयं तु नवमस्तेषां द्वीपः सागरसंवृतः ॥७॥
योजनानां सहस्रं तु द्वीपोयं दक्षिणोत्तरात्। पूर्वे किराता यस्यान्ते पश्चिमे यवनाः स्थिताः ॥८॥

उद्वेग तथा भूख का भय नहीं होता है ॥५३॥ वहाँ की प्रजा स्वस्थ, आतङ्क रहित तथा दुःखों से रहित होती है। उन सबों की आयु बारह हजार वर्ष की होती है ॥५४॥ उन वर्षों में वर्षा कभी नहीं होती है, वहाँ केवल पार्थिव जल ही है। वहाँ सत्ययुग आदि की कल्पना भी नहीं होती है ॥५५॥ इन सभी वर्षों में सात-सात कुलाचल हैं। हे द्विजोत्तम! उन पर्वतों से सैकड़ो नदियाँ निकलती हैं ॥५६॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के द्वितीश अंश के दूसरे अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥२॥

भारत आदि नव खण्डों का विभाग

श्रीपराशर महर्षि ने कहा— जो समुद्र से उत्तर ओर और हिमालय से दक्षिण में स्थित है वह भारत वर्ष है, और वहाँ भरत की सन्तानें निवास करती हैं ॥१॥ हे महामुने! इसका विस्तार नव हजार योजन है। यह स्वर्ग एवं अपवर्ग (मोक्ष) प्राप्त करने वालों की कर्मभूमि है ॥२॥ यहाँ पर सात कुल पर्वत हैं महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, ऋक्षपर्वत, विन्ध्य तथा पारियात्र ॥३॥ हे मुने! इस भारत वर्ष में ही पुरुष स्वर्ग तथा मुक्ति को प्राप्त करते हैं। यहीं पर जीव तिर्यग्योनि (पशु तथा पक्षी की योनि) में तथा नरक में भी जाते हैं ॥४॥ यहीं से जीव अपने कर्मों के अनुसार स्वर्ग, मोक्ष, अन्तरिक्ष तथा पाताल में जाते हैं। भारत वर्ष को छोड़कर कहीं भी जीवों के लिए कर्म भूमि नहीं है ॥५॥ इस भारत वर्ष के नव विभाग हैं— इन्द्रद्वीप, कसेरुद्वीप, ताम्रपर्ण, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्वद्वीप, वारुण तथा नवाँ समुद्र से घिरा हुआ भारत द्वीप ॥६-७॥ उत्तर से दक्षिण तक यह द्वीप हजार